

## भारतीय राष्ट्रवाद के उदय के कारक

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में राष्ट्रीय राजनीतिक चेतना बहुत तेजी से विकसित हुई और भारत में एक संगठित राष्ट्रीय आंदोलन का आरंभ हुआ। दिसंबर 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की नींव पड़ी। आगे चल कर इसी के नेतृत्व में विदेशी शासन से स्वतंत्रता के लिए भारतीयों ने एक लंबा और साहसी संघर्ष किया।

### विदेशी प्रभुत्व के परिणाम

आधुनिक भारतीय राष्ट्रवाद बुनियादी तौर पर विदेशी आधिपत्य की चुनौती के जवाब रूप में उदित हुआ। स्वयं ब्रिटिश शासन की परिस्थितियों ने भारतीय जनता में राष्ट्रीय भावना विकसित करने में सहायता दी। ब्रिटिश शासन और उसके प्रत्यक्ष और परोक्ष परिणामों ने ही भारत में राष्ट्रीय आंदोलन के विकास के लिए भौतिक नैतिक और बौद्धिक परिस्थितियाँ तैयार कीं ।

इस आंदोलन की जड़े भारतीय जनता के हितों और भारत में ब्रिटिश नीतियों के टकराव में थीं । अंग्रेजों ने अपने हितों को पूरा करने के लिए ही भारत को अपने अधीन बनाया था। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए वे भारत का शासन चला रहे थे। वे अक्सर ब्रिटेन के लाभ के लिए भारतीयों की भलाई को भी ध्यान में नहीं रखते थे। धीरे - धीरे भारतीयों ने अनुभव किया कि लांकाशायर के उद्योगपतियों और अंग्रेजों के दूसरे प्रमुख वर्गों के अधिकारों के लिए उनकी अपनी भावनाओं का बलिदान दिया जा रहा है। स्वयं ब्रिटिश शासन भारत के आर्थिक पिछड़ेपन का मुख्य कारण बनता गया और भारत में आंदोलन का आधार यही तथ्य था। यह भारत के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक तथा राजनीतिक विकास में प्रमुख बाधक तत्व बन चुका था। इससे भी बड़ी बात यह है कि अधिक से अधिक भारतीय इस तथ्य को स्वीकार करने लगे थे और उनकी यह संख्या बढ़ती जा रही थी।

भारतीय समाज के प्रत्येक वर्ग और प्रत्येक समूह ने धीरे - धीरे यह देखा कि उसके हित अंग्रेज शासकों के हाथों में असुरक्षित है। किसान देख रहे थे कि सरकार मालगुजारी के नाम पर उनकी उपज का एक बड़ा हिस्सा उनसे ले लेती थी। सरकार और उसकी पुलिस, उसकी अदालतें और उसके अधिकारी, सभी उन जमींदारों और भूस्वामियों के समर्थक और रक्षक जो किसान से

कसकर लगान वसूलते थे वसूलते थे, वे उन व्यापारियों और सूदखोरों के रक्षक थे जो तरह - तरह से किसान को धोखा देते, उसका शोषण करते और उसकी जमीन उससे छीन लेते थे । जब कभी किसान जमींदारों और सूदखोरों के दमन के खिलाफ उठ खड़े होते हैं, तो पुलिस और सेना और व्यवस्था के नाम पर उनको कुचल दिया करती थी ।

दस्तकार और शिल्पी यह महसूस कर रहे थे कि सरकार विदेशी प्रतियोगिता को प्रोत्साहन प्रोत्साहन देकर उनको तबाह कर रही थी और उनके पुनर्वास के लिए कुछ नहीं कर रही थी। आगे चलकर बीसवीं शताब्दी में आधुनिक कारखानों, खदानों तथा बगानों के मजदूरों ने पाया कि सारी जबानी हमदर्दी के बावजूद सरकार पूंजीपतियों का, खासकर विदेशी पूंजीपतियों का ही साथ देती थी। जब कभी मजदूर ट्रेड यूनियन बनाने तथा हड़तालों, प्रदर्शनों और अन्य संघर्षों के द्वारा स्थिति को सुधारने के प्रयत्न करते, सरकार का पूरा तंत्र उनके विरुद्ध उठ खड़ा होता । इसके अलावा उन्होंने यह भी महसूस किया कि बढ़ती बेरोजगारी का समाधान केवल तीव्र औद्योगीकरण से संभव है और यह कार्य केवल एक स्वाधीन सरकार कर सकती है ।

भारतीय समाज के दूसरे समूह भी कुछ कम असंतुष्ट नहीं थे। शिक्षित भारतीयों का उभरता हुआ वर्ग अपने देश की दयनीय आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति को समझने के लिए नए - नए प्राप्त आधुनिक ज्ञान का उपयोग कर रह था। पहले जिन लोगों ने 1857 में ब्रिटिश शासन का समर्थन इस आशा में समर्थन किया था कि विदेशी होने के बावजूद यह शासन देश को एक आधुनिक और औद्योगिक देश बनाएगा, वे अब धीरे - धीरे निराश होने लगे थे। आर्थिक दृष्टि से उन्हें आशा थी कि ब्रिटिश पूंजीवाद ने जैसे ब्रिटेन में उत्पादक शक्तियों को विकसित किया था, उसी प्रकार वह भारत की शक्तियों को भी विकसित करेगा। लेकिन उन्होंने यह पाया कि ब्रिटेन के पूंजीवाद के इशारों पर भारत में ब्रिटिश शासन ने जो नीतियां अपनाई वे देश को आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा या अल्पविकसित बनाए हुए थीं। और उसकी उत्पादक शक्तियों के विकास के बाधक हो रहे थीं।

राजनीतिक स्तर पर शिक्षित भारतीय समुदाय को यह लगा कि अंग्रेजों ने पहले भारत को स्वशासन का मार्ग दिखाने के जो भी दावे किए थे, उन सबको वे भूल चुके थे। अधिकांश ब्रिटिश अधिकारियों और राजनीतिक लोगों ने खुली घोषणा की थी कि अंग्रेज भारत में बने रहेंगे। इसके अलावा भाषण, प्रेस तथा व्यक्ति को और अधिक स्वतन्त्रता देने की जगह उन पर

अधिकाधिक प्रतिबंध लगाते जा रहे थे। अंग्रेज अधिकारियों और लेखकों ने भारतीयों को जनतंत्र या स्वशासन की दृष्टि से अयोग्य घोषित कर दिया था। संस्कृति के क्षेत्र में भी शासक उच्च शिक्षा और आधुनिक विचारों के प्रसार के बारे में अधिकाधिक नकारात्मक, शत्रुतापूर्ण रवैया अपना रहे थे।

उभरते हुए भारतीय पूंजीपति वर्ग में बहुत धीरे-धीरे राष्ट्रीय राजनीतिक चेतना विकसित हुई। लेकिन इस वर्ग ने भी धीरे-धीरे पाया कि वह साम्राज्यवाद के कारण नुकसान उठा रहा था। सरकार की व्यापार, चुंगी, कर और यातायात संबंधी नीतियों के कारण इसके विकास में भारी बाधाएं आ रही थीं। नया और कमजोर वर्ग होने के नाते साथ इसे अपनी कमजोरियों की भरपाई के लिए सरकार की सक्रिय सहायता की जरूरत थी। इसके बजाए सरकार और उसकी नौकरशाही उन विदेशी पूंजीपतियों का साथ दे रहे थे जो अपने विशाल संसाधनों के साथ भारत आकर यहां के सीमित औद्योगिक क्षेत्र को हथिया रहे थे। भारतीय पूंजीपतियों का विशेष विरोध विदेशी पूंजीपतियों की सख्त प्रतियोगिता के प्रति था। इस तरह भारतीय पूंजीपतियों ने भी महसूस किया कि उनके स्वतंत्र विकास और साम्राज्यवाद के बीच एक अंतरविरोध था, और यह कि एक राष्ट्रीय सरकार ही भारतीय व्यापार और उद्योगों के तीव्र विकास की परिस्थितियाँ तैयार कर सकती थी।

भारतीय समाज में केवल जमींदार, भूस्वामी और राजे - महाराजे ही ऐसे वर्ग थे जिनके हित विदेशी शासकों के हितों से मेल खाते थे और इसलिए वे अंत तक विदेशी शासन का साथ देते रहे। लेकिन इन वर्गों से भी बहुत से लोग राष्ट्रीय आंदोलन में आए। उस समय के राष्ट्रवादी वातावरण में देशभक्ति की भावना ने बहुतों को प्रभावित किया। इसके अलावा प्रजातीय भेदभाव और श्रेष्ठता की नीतियों ने प्रत्येक विचारशील, स्वाभिमानि भारतीय में घृणा जगाकर उसे उठ खड़ा किया, चाहे वह किसी भी वर्ग का क्यों न रहा हो। सबसे बड़ी बात यह है कि स्वयं ब्रिटिश शासन के विदेशी चरित्र ने भी राष्ट्रवादी प्रतिक्रिया को जन्म दिया। कारण यह है कि विदेशी दासता गुलाम जनता के दिलों में हमेशा ही देशभक्ति की भावनाएं पैदा करती है।

संक्षेप में, विदेशी साम्राज्यवाद का अपना चरित्र और भारतीय जनता पर उसका हानिकारक प्रभाव, इन बातों के कारण ही भारत में एक प्रतिद्वंद्वी आंदोलन का धीरे - धीरे जन्म और विकास हुआ। यह आंदोलन एक राष्ट्रीय आंदोलन था क्योंकि यह समाज के विभिन्न वर्गों और

समुदायों के लोगों को प्रेरित कर रहा था कि वे अपने मतभेद भुलाकर अपने शत्रु के खिलाफ एकजुट हों।

### **देश का प्रशासकीय और आर्थिक एकीकरण**

उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में भारत का एकीकरण हो चुका था और वह एक राष्ट्र के रूप में उभर चुका था। इसलिए भारतीय जनता में राष्ट्रीय भावनाओं का विकास आसानी से हुआ। अंग्रेजों ने धीरे - धीरे पूरे देश में सरकार की एकसमान, आधुनिक प्रणाली लागू कर दी थी और इस तरह इसके प्रशासकीय एकीकरण हो चुका था। ग्रामीण और स्थानीय आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के विनाश और अखिल भारतीय पैमाने पर आधुनिक व्यापार और उद्योग की स्थापना के कारण भारत का आर्थिक जीवन निरंतर एक इकाई के रूप में ढलता चला गया और देश के विभिन्न हिस्सों में रहने वाले लोगों के आर्थिक हित परस्पर संबद्ध हो गए। उदाहरण के लिए, भारत के किसी एक हिस्से में अकाल फूटता या वस्तुओं की कमी होती है तो दूसरे सभी भागों में भी खाद्य / सामग्री की कीमतों और उपलब्धता पर उसका प्रभाव पड़ता था। इसके अलावा, रेलवे, तार, और एकीकृत डाक व्यवस्था के आरंभ ने भी देश को एकजुट बना दिया था और जनता, विशेष रूप से नेताओं के पारस्परिक संपर्क को बढ़ावा दिया था। इस सिलसिले में भी, विदेशी शासन का अस्तित्व ही एकता का कारण बन गया, हालांकि यह शासन सामाजिक वर्ग, जाति, धर्म या क्षेत्र का भेद किए बिना पूरी भारतीय जनता का दमन करता था। पूरे देश के लोगों ने देखा कि वे एक ही शत्रु अर्थात् ब्रिटिश शासन, के हाथों पीड़ित थे। एक तरफ तो एक भारतीय राष्ट्रवाद के उदय का एक प्रमुख कारण बन गया, और दूसरी तरफ साम्राज्यवाद - विरोधी संघर्ष और उस संघर्ष के दौरान उपजी एकजुटता की भावना ने भारतीय राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

### **पश्चिमी विचार और शिक्षा**

उन्नीसवीं शताब्दी में आधुनिक पाश्चात्य शिक्षा और विचारधारा के प्रसार के फलस्वरूप बहुत बड़ी संख्या में भारतीयों ने एक आधुनिक, बुद्धिसंगत, धर्मनिरपेक्ष, सार्वजनिक और राष्ट्रवादी राजनीतिक दृष्टिकोण अपनाया। वे यूरोपीय राष्ट्रों के समसामयिक राष्ट्रवादी आंदोलनों का अध्ययन, उनकी प्रशंसा और उनकी अनुकरण करने के प्रयत्न भी करने लगे। रूसो, पेन, जान स्टुअर्ट मिल और दूसरे पाश्चात्य विचारक उनके राजनीतिक मार्गदर्शक बन गए जबकि मैजिनी,

गैरीबाल्डी और आयरिश के राष्ट्रवादी नेता उनके राजनीतिक आदर्श हो गए। विदेशी दासता के अपमान की चुभन को सबसे पहले इन्हीं शिक्षित भारतीयों ने महसूस किया। विचारों से आधुनिक बनकर इन लोगों ने विदेश शासन की बुराईयों के अध्ययन की योग्यता भी प्राप्त कर ली। उन्हें एक आधुनिक, मजबूत, समृद्ध और एकतबद्ध भारत की कल्पना से प्रेरणा प्राप्त होती रही। कालांतर में, इन्हीं में से बेहतरीन तत्व राष्ट्रीय आंदोलन के नेता और संगठनकर्ता बने।

हमें यह बात स्पष्ट रूप से समझनी चाहिए कि राष्ट्रीय आंदोलन आधुनिक शिक्षा प्रणाली को उपज नहीं था, बल्कि वह ब्रिटेन और भारत के हितों के टकराव से उत्पन्न हुआ था। इस प्रणाली ने यह किया कि शिक्षित भारतीयों को पाश्चात्य विचार अपनाकर राष्ट्रीय आंदोलन के नेतृत्व को संभालने तथा उसे एक जनतंत्रिक और आधुनिक दिशा देने में समर्थ बनाया। वास्तविकता यह है कि स्कूलों और कालेजों में अधिकारीगण विदेशी शासन के प्रति विनम्रता और सेवा का भाव ही जगाने के प्रयत्न करते थे। राष्ट्रवादी विचार तो आधुनिक विचारों के सामान्य प्रसार के कारण आए। चीन और इंडोनेशिया जैसे दूसरे एशियाई देशों में और पूरे अफ्रीका में भी आधुनिक और राष्ट्रवादी विचार फैले हालांकि वहाँ आधुनिक स्कूलों और कालेजों की संख्या बहुत कम थी।

आधुनिक शिक्षा ने शिक्षित भारतीयों के दृष्टिकोण तथा एक सीमा तक एकजुटता और समानता पैदा की। इस सिलसिले में अंग्रेजी भाषा की एक महत्वपूर्ण भूमिका रही। यह आधुनिक विचारों के प्रसार का साधन बन गया। यह देश विभिन्न भाषाई क्षेत्रों के शिक्षित भारतीयों के बीच यह बन गई। यह देश के विभिन्न भाषाई क्षेत्रों के शिक्षित भारतीयों के बीच विचारों का आदान-प्रदान तथा संपर्क का माध्यम बन गई। लेकिन जल्दी ही अंग्रेजी साधारण जनता में आधुनिक ज्ञान के प्रसार में बाधक भी बन गई। यह शिक्षित नागरिक वर्ग को साधारण जनता खासकर ग्रामीण जनता से अलग रखने का काम भी करने लगी। भारत के राजनीतिक नेताओं ने इस तथ्य को अच्छी तरह समझा दादाभाई नौरोजी, सैयद अहमद खान, और जस्टिस रानाडे से लेकर तिलक और गांधीजी तक सभी ने शिक्षा प्रणाली में भारतीय भाषाओं को एक बड़ी भूमिका दिये जाने की मांग पर आंदोलन किए। वास्तव में जहाँ तक साधारण जनता का सवाल था, आधुनिक विचारों का प्रसार विकासमान भारतीय भाषाओं, उनमें विकसित हो रहे साहित्य तथा सबसे अधिक तो भारतीय भाषाओं के लोकप्रिय प्रेस के कारण हुआ।

## प्रेस तथा साहित्य की भूमिका

वह प्रमुख साधन प्रेस था जिसके द्वारा राष्ट्रवादी भारतीयों ने देशभक्ति की भावनाओं का, आधुनिक आर्थिक - सामाजिक - राजनीतिक विचारों का प्रचार किया तथा एक अखिल भारतीय चेतना जगाई। 19वीं सदी के उत्तरार्ध में बड़ी संख्या में राष्ट्रवादी समाचारपत्र निकले। उनके पन्नों पर सरकारी नीतियों की लगातार आलोचना होती थी, भारतीय दृष्टिकोण को सामने रखा जाता था, लोगों को एकजुट होकर राष्ट्रीय कल्याण के काम करने को था, और जनता के बीच स्वशासन, जनतंत्र, संशोधन, आदि के विचारों को लोकप्रिय बनाया जाता था। देश के विभिन्न भागों में रहने वाले राष्ट्रवादी कार्यकर्ताओं को भी परस्पर विचारों को बातचीत - प्रदान करने में राष्ट्रपति ने समर्थन कहा जाता है। उनके पन्नों पर सरकारी नीतियों की लगातार आलोचना होती थी, भारतीय दृष्टिकोण को सामने रखा जाता था, लोगों को एकजुट होकर राष्ट्रीय कल्याण के काम करने को कहा जाता था, तथा जनता के बीच स्वशासन, जनतंत्र, संशोधन, आदि के विचारों को लोकप्रिय बनाया जाता था। देश के विभिन्न भागों में रहने वाले राष्ट्रवादी कार्यकर्ताओं को भी परस्पर विचारों के आदान - प्रदान करने में प्रेस ने समर्थ बनाया।

उपन्यासों, निबंधों, देशभक्तिपूर्ण काव्य आदि के रूप में राष्ट्रीय साहित्य ने भी राष्ट्रीय चेतना जगाने में प्रमुख भूमिका निभाई। बंगला में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय और रवींद्रनाथ टैगोर, असमी में लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ, मराठी में विष्णु शास्त्री चिपलुनकर तमिल में सुब्रमण्य भारती, हिंदी में भारतेन्दु हरिश्चंद्र और उर्दू - अल्ताफ हुसैन हाली इस काल के कुछ प्रमुख राष्ट्रवादी लेखक थे।

## भारत के अतीत की खोज

कई भारतीय इस कदर परस्त हो चुके थे कि वे अपनी स्वशासन की क्षमता में एकदम भरोसा खो बैठे थे। इसके अलावा उस समय के अधिकांश ब्रिटिश अधिकारी और लेखक लगातार यह बात दोहराते रहते थे कि भारतीय लोग कभी भी अपना शासन चलाने के योग्य नहीं थे कि हिंदू और मुस्लिम आपस में लड़ते रहे हैं, कि भारतीयों के भाग्य में ही विदेशियों के अधीन रहना लिखा है, कि उनका धर्म और सामाजिक जीवन पतित और असभ्य रहे हैं और इस कारण वे लोकतंत्र या स्वशासन तक के काबिल नहीं हैं। इस प्रचार का जवाब देकर कई राष्ट्रवादी नेताओं ने आत्मविश्वास और आत्मसम्मान जगाने के प्रयत्न किए। वे गर्व से भारत की सांस्कृतिक धरोहर की ओर संकेत करते और आलोचकों का ध्यान अशोक, अकबर और चंद्रगुप्त विक्रमादित्य जैसे

शासकों ने विद्वानों कला, वास्तुकला, साहित्य, दर्शन, विज्ञान और राजनीति में भारत की राष्ट्रीय धरोहर की फिर से खोज करने में जो कुछ किया , उससे इन राष्ट्रवादी नेताओं को बल और प्रोत्साहन मिला। दुर्भाग्य से कुछ राष्ट्रवादी नेता दूसरे छोर तक चले गए और भारत के अतीत की कमजोरियों और पिछड़ेपन से आँखें चुराकर गैर - लोचनात्मक ढंग से उसे महिमा मंडित करने लगे। विशेष रूप से प्राचीन भारत की उपलब्धियों के प्रचार करने तथा मध्यकालीन भारत की उतनी ही महान उपलब्धियों को अनदेखा करने की प्रवृत्ति ने भी बहुत नुकसान पहुंचाया। इसके कारण हिंदुओं में सांप्रदायिक भावनाओं के विकास को प्रोत्साहन मिला। साथ ही इसकी जवाबी प्रवृत्ति के रूप में मुसलमान सांस्कृतिक और ऐतिहासिक प्रेरणा पाने के लिए अरबों और तुर्कों के इतिहास की ओर नजर करने लगे। इसके अलावा, पश्चिम के सांस्कृतिक साम्राज्यवाद की चुनौती का जवाब देते समय बहुत से भारतीय यह बात भी भूल गए थे कि भारत की जनता कई क्षेत्रों में सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़ी थी। इससे गर्व और आत्मसंतोष की एक झूठी भावना पनपी जो भारतीयों को अपने समाज के आलोचनात्मक अध्ययन से रोकती थी। इसके कारण सामाजिक - सांस्कृतिक पिछड़ेपन के खिलाफ संघर्ष कमजोर हुआ, और कई भारतीय दूसरी जातियों के स्वस्थ और नए विचारों और नए प्रवृत्तियों से विमुख रहे।

### **शासकों का जातीय दंभ**

भारत में राष्ट्रीय भावनाओं के विकास का एक गौण लेकिन महत्वपूर्ण कारण जातीय श्रेष्ठता का वह दंभ था जो भारतीयों के प्रति कई अंग्रेजों के व्यवहार में पाया जाता था। इस जातीय दंभ का एक कड़वा और प्रचलित रूप तब देखने को मिलता था, जब कोई अंग्रेज किसी भारतीय से किसी विवाद में उलझा होता था और न्याय व्यवस्था अंग्रेज का पक्ष लेती थी। जैसा कि जी. ओ. ट्रेवेलियन ने 1864 में लिखा है: " हमारे अपने देश के एक व्यक्ति का बयान भी अदालतों में अनेक हिंदुओं से अधिक महत्व रखता है। यह एक ऐसी परिस्थिति है जिसमें शक्ति का एक भयानक साधन एक बेइमान और चालाक अंग्रेज के हाथों में पहुंच जाता है। " यह जातीय दंभ जाति, धर्म प्रांत या वर्ग का भेदभाव किए बिना तमाम भारतीयों को एक समान हीन करार देता था। वे यूरोपीय लोगों के क्लबों में नहीं जा सकते थे और अक्सर उन्हें किसी गाड़ी के उस डिब्बे में यात्रा की अनुमति नहीं थी, जिसमें यूरोपीय यात्री जा रहे हों। इससे उनके राष्ट्रीय अपमान का बोध हुआ और अंग्रेजों के मुकाबले वे अपने - आपको एक जनगण के रूप में देखने लगे।